12073CH01

पाठ परिचय

1

सूरदास की झोंपड़ी

सूरदास की झोंपड़ी *प्रेमचंद के उपन्यास* ***रंगभूमि*** *का एक अंश है। एक दृष्टिहीन व्यक्ति जितना बेबस और लाचार जीवन जीने को अभिशप्त होता है, सूरदास का चरित्र ठीक इसके विपरीत है। सूरदास अपनी परिस्थितियों से जितना दुखी व आहत है उससे कहीं अधिक आहत है भैरों और जगधर द्वारा किए जा रहे अपमान से, उनकी ईर्ष्या से।*

भैरों की पत्नी सुभागी भैरों की मार के डर से सूरदास की झोंपड़ी में छिप जाती है और सुभागी को मारने भैरों सूरदास की झोंपड़ी में घुस जाता है, किंतु सूरदास के हस्तक्षेप से वह उसे मार नहीं पाता। इस घटना को लेकर पूरे मुहल्ले में सूरदास की बदनामी होती है। जगधर और भैरों तथा अन्य लोग उसके चरित्र पर प्रश्न उठाते हैं। इस घटना से उसे इतनी आत्मग्लानि हुई कि वह फूट-फूटकर रोया। भैरों को उकसाने और भड़काने में जगधर की प्रमुख भूमिका रही। उसे ईर्ष्या इस बात की थी कि सूरदास चैन से रहता है, खाता-पीता है, उसके चेहरे पर निराशा नहीं झलकती, जबकि जगधर को खाने-कमाने के लाले पड़े हुए हैं। भैरों की बहुरिया सुभागी पर जगधर नज़र भी रखता था। सूरदास और सुभागी के संबंधों की चर्चा पूरे मुहल्ले में इतनी हुई कि भैरों अपने अपमान और बदनामी का बदला लेने की सोच बैठा। उसने गाँठ बाँध ली कि जब तक सूरे को रुलाएगा, तड़पाएगा नहीं तब तक उसे चैन नहीं मिलेगा। उसे लगा समाज में इतनी बदनामी तो हो ही गई, भोज-भात बिरादरी को कहाँ से देगा? भैरों सूरदास पर नज़र रखने लगा। अंततः उसके रुपयों की थैली उठा ले गया और सूरदास की झोंपड़ी में आग लगा दी।

सूरदास के चरित्र की विशेषता यह है कि झोंपड़ी के जला दिए जाने के बावजूद वह किसी से प्रतिशोध लेने में विश्वास नहीं करता बल्कि पुनर्निर्माण में विश्वास करता है। इसीलिए वह मिठुआ के सवाल–"जो कोई सौ लाख बार झोंपड़ी को आग लगा दे तो" के जवाब में दृढ़ता के साथ उत्तर देता है–"तो हम भी सौ लाख बार बनाएँगे"।

प्रेमचंद

सूरदास की झोंपड़ी

रात के दो बजे होंगे कि अकस्मात् सूरदास की झोंपड़ी से ज्वाला उठी। लोग अपने-अपने द्वारों पर सो रहे थे। निद्रावस्था में भी उपचेतना जागती रहती है। दम-के-दम में सैकड़ों आदमी जमा हो गए। आसमान पर लाली छाई हुई थी, ज्वालाएँ लपक-लपककर आकाश की ओर दौड़ने लगीं। कभी उनका आकार किसी मंदिर के स्वर्ण-कलश का-सा हो जाता था, कभी वे वायु के झोंकों से यों कंपित होने लगती थीं, मानो जल में चाँद का प्रतिबिंब है। आग बुझाने का प्रयत्न किया जा रहा था पर झोंपड़े की आग, ईर्ष्या की आग की भाँति कभी नहीं बुझती। कोई पानी ला रहा था, कोई यों ही शोर मचा रहा था किंतु अधिकांश लोग चुपचाप खड़े नैराश्यपूर्ण दृष्टि से अग्निदाह को देख रहे थे, मानो किसी मित्र की चिताग्नि है।

सहसा सूरदास दौड़ा हुआ आया और चुपचाप ज्वाला के प्रकाश में खड़ा हो गया। बजरंगी ने पूछा—यह कैसे लगी सूरे, चूल्हे में तो आग नहीं छोड़ दी थी?

सूरदास – झोंपड़े में जाने का कोई रास्ता ही नहीं है?

बजरंगी – अब तो अंदर-बाहर सब एक हो गया है। दीवारें जल रही हैं।

सूरदास – किसी तरह नहीं जा सकता?

बजरंगी – कैसे जाओगे? देखते नहीं हो, यहाँ तक लपटें आ रही हैं!

जगधर – सूरे, क्या आज चूल्हा ठंडा नहीं किया था?

नायकराम – चूल्हा ठंडा किया होता, तो दुश्मनों का कलेजा कैसे ठंडा होता।

जगधर – पंडाजी, मेरा लड़का काम न आए, अगर मुझे कुछ भी मालूम हो। तुम मुझ पर नाहक सुभा करते हो।

नायकराम – मैं जानता हूँ जिसने लगाई है। बिगाड़ न दूँ, तो कहना।

ठाकुरदीन – तुम क्या बिगाड़ोगे, भगवान आप ही बिगाड़ देंगे। इसी तरह जब मेरे घर में चोरी हुई थी, तो सब स्वाहा हो गया।

जगधर – जिसके मन में इतनी खुटाई हो, भगवान उसका सत्यानाश कर दें।

सूरदास – अब तो लपट नहीं आती।

बजरंगी – हाँ, फूस जल गया, अब धरन जल रही है।

सूरदास – अब तो अंदर जा सकता हूँ?

नायकराम – अंदर तो जा सकते हो; पर बाहर नहीं निकल सकते। अब चलो आराम से सो रहो जो होना था, हो गया। पछताने से क्या होगा?

सूरदास – हाँ, सो रहूँगा, जल्दी क्या है!

थोड़ी देर में रही-सही आग भी बुझ गई। कुशल यह हुई कि और किसी के घर में आग न लगी। सब लोग इस दुर्घटना पर आलोचनाएँ करते हुए विदा हुए। सन्नाटा छा गया। किंतु सूरदास अब भी वहीं बैठा हुआ था। उसे झोंपड़े के जल जाने का दु:ख न था, बरतन आदि के जल जाने का भी दु:ख न था; दु:ख था उस पोटली का, जो उसकी उम्र भर की कमाई थी, जो उसके जीवन की सारी आशाओं का आधार थी, जो उसकी सारी यातनाओं और रचनाओं का निष्कर्ष थी। इस छोटी सी पोटली में उसका, उसके पितरों का और उसके नामलेवा का उद्धार संचित था। यही उसके लोक और परलोक, उसकी दीन-दुनिया का आशा-दीपक थी। उसने सोचा—पोटली के साथ रुपये थोड़े ही जल गए होंगे? अगर रुपये पिघल भी गए होंगे, तो चाँदी कहाँ जाएगी? क्या जानता था कि आज यह विपत्ति आनेवाली है, नहीं तो यहीं न सोता! पहले तो कोई झोंपड़ी के पास आता ही न और अगर आग लगाता भी, तो पोटली को पहले ही निकाल लेता। सच तो यों है कि मुझे यहाँ रुपये रखने ही न चाहिए थे। पर रखता कहाँ? मुहल्ले में ऐसा कौन है, जिसे रखने को देता? हाय! पूरे पाँच सौ रुपये थे, कुछ पैसे ऊपर हो गए थे। क्या इसी दिन के लिए पैसे-पैसे बटोर रहा था?

खा लिया होता, तो कुछ तस्कीन होती। क्या सोचता था और क्या हुआ! गया जाकर पितरों को पिंडा देने का इरादा किया था। अब उनसे कैसे गला छूटेगा? सोचता था, कहीं मिठुआ की सगाई ठहर जाए, तो कर डालूँ। बहू घर में आ जाए, तो एक रोटी खाने को मिले! अपने हाथों ठोंक-ठोंककर खाते एक जुग बीत गया। बड़ी भूल हुई। चाहिए था कि जैसे-जैसे हाथ में रुपये आते, एक-एक काम पूरा करता जाता। बहुत पाँव फैलाने का यही फल है!

उस समय तक राख ठंडी हो चुकी थी। सूरदास अटकल से द्वार की ओर झोंपड़े में घुसा; पर दो-तीन पग के बाद एकाएक पाँव भूबल में पड़ गया। ऊपर राख थी, लेकिन नीचे आग। तुरंत पाँव खींच लिया और अपनी लकड़ी से राख को उलटने-पलटने लगा, जिससे नीचे की आग भी जल्द राख हो जाए। आध घंटे में उसने सारी राख नीचे से ऊपर कर दी, और तब फिर डरते-डरते राख में पैर रखा। राख गरम थी, पर असह्य न थी। उसने उसी जगह की सीध में राख को टटोलना शुरू किया, जहाँ छप्पर में पोटली रखी थी। उसका दिल धड़क रहा था। उसे विश्वास था कि रुपये मिलें या न मिलें, पर चाँदी तो कहीं गई ही नहीं। सहसा वह उछल पड़ा, कोई भारी चीज़ हाथ लगी। उठा लिया; पर टटोलकर देखा, तो मालूम हुआ ईंट का टुकड़ा है। फिर टटोलने लगा, जैसे कोई आदमी पानी में मछलियाँ टटोले। कोई चीज़ हाथ न लगी। तब तो उसने नैराश्य की उतावली और अधीरता के साथ सारी राख छान डाली। एक-एक मुट्ठी राख हाथ में लेकर देखी। लोटा मिला, तवा मिला, किंतु पोटली न मिली। उसका वह पैर, जो अब तक सीढ़ी पर था, फिसल गया और अब वह अथाह गहराई में जा पड़ा। उसके मुख से सहसा एक चीख निकल आई। वह वहीं राख पर बैठ गया और बिलख-बिलखकर रोने लगा। यह फूस की राख न थी, उसकी अभिलाषाओं की राख थी। अपनी बेबसी का इतना दु:ख उसे कभी न हुआ था।

तड़का हो गया, सूरदास अब राख के ढेर को बटोरकर एक जगह कर रहा था। आशा से ज़्यादा दीर्घजीवी और कोई वस्तु नहीं होती।

उसी समय जगधर आकर बोला—सूरे, सच कहना, तुम्हें मुझ पर तो सुभा नहीं है?

सूरे को सुभा तो था, पर उसने इसे छिपाकर कहा—तुम्हारे ऊपर क्यों सुभा करूँगा? तुमसे मेरी कौन सी अदावत थी?

जगधर – मुहल्लेवाले तुम्हें भड़काएँगे, पर मैं भगवान से कहता हूँ, मैं इस बारे में कुछ नहीं जानता।

सूरदास – अब तो जो कुछ होना था, हो चुका। कौन जाने, किसी ने लगा दी या किसी की चिलम से उड़कर लग गई? यह भी तो हो सकता है कि चूल्हे में आग रह गई हो। बिना जाने-बूझे किस पर सुभा करूँ?

जगधर – इसी से तुम्हें चिता दिया कि कहीं सुभे में मैं भी न मारा जाऊँ।

सूरदास – तुम्हारी तरफ से मेरा दिल साफ है।

जगधर को भैरों की बातों से अब यह विश्वास हो गया कि यह उसी की शरारत है। उसने सूरदास को रुलाने की बात कही थी। उस धमकी को इस तरह पूरा किया। वह वहाँ से सीधे भैरों के पास गया। वह चुपचाप बैठा नारियल का हुक्का पी रहा था, पर मुख से चिंता और घबराहट झलक रही थी। जगधर को देखते ही बोला—कुछ सुना; लोग क्या बातचीत कर रहे हैं?

जगधर – सब लोग तुम्हारे ऊपर सुभा करते हैं। नायकराम की धमकी तो तुमने अपने कानों से सुनी।

भैरों – यहाँ ऐसी धमकियों की परवा नहीं है। सबूत क्या है कि मैंने लगाई?

जगधर – सच कहो, तुम्हीं ने लगाई?

भैरों – हाँ, चुपके से एक दियासलाई लगा दी।

जगधर – मैं कुछ-कुछ पहले ही समझ गया था पर यह तुमने बुरा किया। झोंपड़ी जलाने से क्या मिला? दो-चार दिन में फिर दूसरी झोंपड़ी तैयार हो जाएगी।

भैरों – कुछ हो, दिल की आग तो ठंडी हो गई! यह देखो!

यह कहकर उसने एक थैली दिखाई, जिसका रंग धुएँ से काला हो गया था। जगधर ने उत्सुक होकर पूछा—इसमें क्या है? अरे! इसमें तो रुपये भरे हुए हैं।

भैरों – यह सुभागी को बहका ले जाने का जरीबाना है।

जगधर – सच बताओ, ये रुपये कहाँ मिले?

भैरों – उसी झोंपड़े में। बड़े जतन से धरन की आड़ में रखे हुए थे। पाजी रोज राहगीरों को ठग-ठगकर पैसे लाता था और इसी थैली में रखता था। मैंने गिने हैं। पाँच सौ से ऊपर हैं। न जाने कैसे इतने रुपये जमा हो गए। बच्चू को इन्हीं रुपयों की गरमी थी। अब गरमी निकल गई। अब देखूँ किस बल पर उछलते हैं। बिरादरी को भोज-भात देने का सामान हो गया। नहीं तो इस बखत रुपये कहाँ मिलते? आजकल तो देखते ही हो, बल्लमटेरों के मारे बिकरी कितनी मंदी है।

जगधर – मेरी तो सलाह है कि रुपये उसे लौटा दो। बड़ी मसक्कत की कमाई है। हजम न होगी।

जगधर दिल का खोटा आदमी नहीं था; पर इस समय उसने यह सलाह उसे नेकनीयती से नहीं, हसद से दी थी। उसे यह असह्य था कि भैरों के हाथ इतने रुपये लग जाएँ। भैरों आधे रुपये उसे देता, तो शायद उसे तस्कीन हो जाती पर भैरों से यह आशा न की जा सकती थी। बेपरवाही से बोला—मुझे अच्छी तरह हजम हो जाएगी। हाथ में आए हुए रुपये को नहीं लौटा सकता। उसने तो भीख माँगकर ही जमा किए हैं, गेहूँ तो नहीं तौला था।

जगधर – पुलिस सब खा जाएगी।

भैरों – सूरे पुलिस में न जाएगा। रो-धोकर चुप हो जाएगा।

जगधर – गरीब की हाय बड़ी जानलेवा होती है।

भैरों – वह गरीब है! अंधा होने से ही गरीब हो गया? जो आदमी दूसरों की औरतों पर डोरे डाले, जिसके पास सैकड़ों रुपये जमा हों, जो दूसरों को रुपये उधार देता हो, वह गरीब है? गरीब जो कहो, तो हम-तुम हैं। घर में ढूँढ़ आओ, एक पूरा रुपया न निकलेगा। ऐसे पापियों को गरीब नहीं कहते। अब भी मेरे दिल का काँटा नहीं निकला। जब तक उसे रोते न देखूँगा, यह काँटा न निकलेगा। जिसने मेरी आबरू बिगाड़ दी, उसके साथ जो चाहे करूँ, मुझे पाप नहीं लग सकता।

जगधर का मन आज खोंचा लेकर गलियों का चक्कर लगाने में न लगा। छाती पर साँप लोट रहा था–इसे दम-के-दम में इतने रुपये मिल गए, अब मौज उड़ाएगा। तकदीर इस तरह खुलती है। यहाँ कभी पड़ा हुआ पैसा भी न मिला। पाप-पुन्न की कोई बात नहीं। मैं ही कौन दिनभर पुन्न किया करता हूँ? दमड़ी-छदाम-कौड़ियों के लिए टेनी मारता हूँ! बाट खोटे रखता हूँ, तेल की मिठाई को घी की कहकर बेचता हूँ। ईमान गँवाने पर भी कुछ नहीं लगता। जानता हूँ, यह बुरा काम है पर बाल-बच्चों को पालना भी तो ज़रूरी है। इसने ईमान खोया, तो कुछ लेकर खोया, गुनाह बेलज्जत नहीं रहा। अब दो-तीन दुकानों का और ठेका ले लेगा। ऐसा ही कोई माल मेरे हाथ भी पड़ जाता, तो जिंदगानी सुफल हो जाती।

जगधर के मन में ईर्ष्या का अंकुर जमा। वह भैरों के घर से लौटा तो देखा कि सूरदास राख को बटोरकर उसे आटे की भाँति गूँथ रहा है। सारा शरीर भस्म से ढका हुआ है और पसीने की धारें निकल रही हैं। बोला–सूरे, क्या ढूँढ़ते हो?

सूरदास – कुछ नहीं। यहाँ रखा ही क्या था! यही लोटा-तवा देख रहा था।

जगधर – और वह थैली किसकी है, जो भैरों के पास है?

सूरदास चौंका। क्या इसीलिए भैरों आया था? जरूर यही बात है। घर में आग लगाने के पहले रुपये निकाल लिए होंगे।

लेकिन अंधे भिखारी के लिए दरिद्रता इतनी लज्जा की बात नहीं है, जितना धन। सूरदास जगधर से अपनी आर्थिक हानि को गुप्त रखना चाहता था। वह गया जाकर पिंडदान करना चाहता था, मिठुआ का ब्याह करना चाहता था, कुआँ बनवाना चाहता था, किंतु इस ढंग से कि लोगों को आश्चर्य हो कि इसके पास रुपये कहाँ से आए, लोग यही समझें कि भगवान दीनजनों की सहायता करते हैं। भिखारियों के लिए धन-संचय पाप-संचय से कम अपमान की बात नहीं है। बोला–मेरे पास थैली-वैली कहाँ? होगी किसी की। थैली होती, तो भीख माँगता?

जगधर – मुझसे उड़ते हो? भैरों मुझसे स्वयं कह रहा था कि झोंपड़े में धरन के ऊपर यह थैली मिली। पाँच सौ रुपये से कुछ बेसी हैं।

सूरदास – वह तुमसे हँसी करता होगा। साढ़े पाँच रुपये तो कभी जुड़े ही नहीं, साढ़े पाँच सौ कहाँ से आते!

इतने में सुभागी वहाँ आ पहुँची। रातभर मंदिर के पिछवाड़े अमरूद के बाग में छिपी बैठी थी। वह जानती थी, आग भैरों ने लगाई है। भैरों ने उस पर जो कलंक लगाया था, उसकी उसे विशेष चिंता न थी क्योंकि वह जानती थी किसी को इस पर विश्वास न आएगा। लेकिन मेरे कारण सूरदास का यों सर्वनाश हो जाए, इसका उसे बड़ा दुःख था। वह इस समय उसको तस्कीन देने आई थी। जगधर को वहाँ खड़े देखा, तो झिझकी। भय हुआ, कहीं यह मुझे पकड़ न ले। जगधर को वह भैरों ही का दूसरा अवतार समझती थी। उसने प्रण कर लिया था कि अब भैरों के घर न जाऊँगी, अलग रहूँगी और मेहनत-मजूरी करके जीवन का निर्वाह करूँगी। यहाँ कौन लड़के रो रहे हैं, एक मेरा ही पेट उसे भारी है न? अब अकेले ठोंके और खाए, और बुढ़िया के चरण धो-धोकर पिए, मुझसे तो यह नहीं हो सकता। इतने दिन हुए, इसने कभी अपने मन से धेले का सेंदुर भी न दिया होगा, तो मैं क्यों उसके लिए मरूँ?

वह पीछे लौटना ही चाहती थी कि जगधर ने पुकारा–सुभागी, कहाँ जाती है? देखी अपने खसम की करतूत, बेचारे सूरदास को कहीं का न रखा।

सुभागी ने समझा, मुझे झाँसा दे रहा है। मेरे पेट की थाह लेने के लिए यह जाल फेंका है। व्यंग्य से बोली–उसके गुरु तो तुम्हीं हो, तुम्हीं ने मंत्र दिया होगा।

जगधर – हाँ, यही मेरा काम है, चोरी-डाका न सिखाऊँ, तो रोटियाँ क्योंकर चलें...! जब तक समझता था, भला आदमी है, साथ बैठता था, हँसता-बोलता था, लेकिन आज से कभी उसके पास बैठते देखा, तो कान पकड़ लेना। जो आदमी दूसरों के घर में आग लगाए, गरीबों के रुपये चुरा ले जाए, वह अगर मेरा बेटा भी हो तो उसकी सूरत न देखूँ। सूरदास ने न जाने कितने जतन से पाँच सौ रुपये बटोरे थे। वह सब उड़ा ले गया। कहता हूँ, लौटा दो, तो लड़ने पर तैयार होता है।

सूरदास– फिर वही रट लगाए जाते हो। कह दिया कि मेरे पास रुपये नहीं थे, कहीं और जगह से मार लाया होगा, मेरे पास पाँच सौ रुपये होते, तो चैन की बंसी न बजाता, दूसरों के सामने हाथ क्यों पसारता?

जगधर – सूरे, अगर तुम भरी गंगा में कहो कि मेरे रुपये नहीं हैं, तो मैं न मानूँगा। मैंने अपनी आँखों से वह थैली देखी है। भैरों ने अपने मुँह से कहा कि यह थैली झोंपड़े में धरन के ऊपर मिली। तुम्हारी बात कैसे मान लूँ?

सुभागी – तुमने थैली देखी है?

जगधर – हाँ, देखी नहीं तो क्या झूठ बोल रहा हूँ?

सुभागी – सूरदास, सच-सच बता दो, रुपये तुम्हारे हैं!

सूरदास – पागल हो गई है क्या? इनकी बातों में आ जाती है! भला मेरे पास रुपये कहाँ से आते?

जगधर – इनसे पूछ, रुपये न थे, तो इस घड़ी राख बटोरकर क्या ढूँढ़ रहे थे?

सुभागी ने सूरदास के चेहरे की तरफ़ अन्वेषण की दृष्टि से देखा। उसकी उस बीमार की-सी दशा थी, जो अपने प्रियजनों की तस्कीन के लिए अपनी असह्य वेदना को छिपाने का असफल प्रयत्न कर रहा हो। जगधर के निकट आकर बोली–रुपये जरूर थे, इसका चेहरा कहे देता है।

जगधर – मैंने थैली अपनी आँखों से देखी है।

सुभागी – अब चाहे वह मुझे मारे या निकाले पर रहूँगी उसी के घर। कहाँ-कहाँ थैली को छिपाएगा? कभी तो मेरे हाथ लगेगी। मेरे ही कारण इस पर यह बिपत पड़ी है। मैंने ही उजाड़ा है, मैं ही बसाऊँगी। जब तक इसके रुपये न दिला दूँगी, मुझे चैन न आएगी।

यह कहकर वह सूरदास से बोली–तो अब रहोगे कहाँ?

सूरदास ने यह बात न सुनी। वह सोच रहा था–रुपये मैंने ही तो कमाए थे, क्या फिर नहीं कमा सकता? यही न होगा, जो काम इस साल होता, वह कुछ दिनों के बाद होगा। मेरे रुपये थे ही नहीं, शायद उस जन्म में मैंने भैरों के रुपये चुराए होंगे। यह उसी का दंड मिला है। मगर बेचारी सुभागी का अब क्या हाल होगा? भैरों उसे अपने घर में कभी न रखेगा। बिचारी कहाँ मारी-मारी फिरेगी! यह कलंक भी मेरे सिर लगना था। कहीं का न हुआ। धन गया, घर गया, आबरू गई; ज़मीन बच रही है, यह भी न जाने, जाएगी या बचेगी। अंधापन ही क्या थोड़ी बिपत थी कि नित ही एक-न-एक चपत पड़ती रहती है। जिसके जी में आता है, चार खोटी-खरी सुना देता है।

इन दुःखजनक विचारों से मर्माहत-सा होकर वह रोने लगा। सुभागी जगधर के साथ भैरों के घर की ओर चली जा रही थी और यहाँ सूरदास अकेला बैठा हुआ रो रहा था।

सहसा वह चौंक पड़ा। किसी ओर से आवाज़ आई–तुम खेल में रोते हो!

मिठुआ घीसू के घर से रोता चला आता था, शायद घीसू ने मारा था। इस पर घीसू उसे चिढ़ा रहा था–खेल में रोते हो!

सूरदास कहाँ तो नैराश्य, ग्लानि, चिंता और क्षोभ के अपार जल में गोते खा रहा था, कहाँ यह चेतावनी सुनते ही उसे ऐसा मालूम हुआ, किसी ने उसका हाथ पकड़कर किनारे पर खड़ा कर दिया। वाह! मैं तो खेल में रोता हूँ। कितनी बुरी बात है! लड़के भी खेल में रोना बुरा समझते हैं, रोनेवाले को चिढ़ाते हैं, और मैं खेल में रोता हूँ। सच्चे खिलाड़ी कभी रोते नहीं, बाज़ी-पर-बाज़ी हारते हैं, चोट-पर-चोट खाते हैं, धक्के-पर-धक्के सहते हैं पर मैदान में डटे रहते हैं, उनकी त्योरियों पर बल नहीं पड़ते। हिम्मत उनका साथ नहीं छोड़ती, दिल पर मालिन्य के छींटे भी नहीं आते, न किसी से जलते हैं, न चिढ़ते हैं। खेल में रोना कैसा? खेल हँसने के लिए, दिल बहलाने के लिए है, रोने के लिए नहीं।

सूरदास उठ खड़ा हुआ, और विजय-गर्व की तरंग में राख के ढेर को दोनों हाथों से उड़ाने लगा।

आवेग में हम उद्दिष्ट स्थान से आगे निकल जाते हैं। वह संयम कहाँ है, जो शत्रु पर विजय पाने के बाद तलवार को म्यान में कर ले?

एक क्षण में मिठुआ, घीसू और मुहल्ले के बीसों लड़के आकर इस भस्म-स्तूप के चारों ओर जमा हो गए और मारे प्रश्नों के सूरदास को परेशान कर दिया। उसे राख फेंकते देखकर सबों को खेल हाथ आया। राख की वर्षा होने लगी। दम-के-दम में सारी राख बिखर गई, भूमि पर केवल काला निशान रह गया।

मिठुआ ने पूछा—दादा, अब हम रहेंगे कहाँ?

सूरदास – दूसरा घर बनाएँगे।

मिठुआ – और कोई फिर आग लगा दे?

सूरदास – तो फिर बनाएँगे।

मिठुआ – और फिर लगा दे?

सूरदास – तो हम भी फिर बनाएँगे।

मिठुआ – और कोई हजार बार लगा दे?

सूरदास – तो हम हजार बार बनाएँगे।

बालकों को संख्याओं से विशेष रुचि होती है। मिठुआ ने फिर पूछा—और जो कोई सौ लाख बार लगा दे?

सूरदास ने उसी बालोचित सरलता से उत्तर दिया—तो हम भी सौ लाख बार बनाएँगे।

❒ *'रंगभूमि' उपन्यास का अंश*

प्रश्न-अभ्यास

1. 'चूल्हा ठंडा किया होता, तो दुश्मनों का कलेजा कैसे ठंडा होता?' नायकराम के इस कथन में निहित भाव को स्पष्ट कीजिए।
2. भैरों ने सूरदास की झोपड़ी क्यों जलाई?
3. 'यह फूस की राख न थी, उसकी अभिलाषाओं की राख थी।' संदर्भ सहित विवेचन कीजिए।
4. जगधर के मन में किस तरह का ईर्ष्या-भाव जगा और क्यों?
5. सूरदास जगधर से अपनी आर्थिक हानि को गुप्त क्यों रखना चाहता था?
6. 'सूरदास उठ खड़ा हुआ और विजय-गर्व की तरंग में राख के ढेर को दोनों हाथों से उड़ाने लगा।' इस कथन के संदर्भ में सूरदास की मनोदशा का वर्णन कीजिए।
7. 'तो हम सौ लाख बार बनाएँगे' इस कथन के संदर्भ में सूरदास के चरित्र का विवेचन कीजिए।

योग्यता-विस्तार

1. इस पाठ का नाट्य रूपांतर कर उसकी प्रस्तुति कीजिए।
2. प्रेमचंद के उपन्यास 'रंगभूमि' का संक्षिप्त संस्करण पढ़िए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

उपचेतना	–	नींद में जागते रहने का अहसास
अग्निदाह	–	आग की लपटें, आग का दहन
चिताग्नि	–	चिता में लगी अग्नि
खुटाई	–	खोट
तस्कीन	–	तसल्ली, दिलासा
भूबल	–	ऊपर राख नीचे आग
अदावत	–	दुश्मनी
जरीबाना	–	जुर्माना, दंड
नाहक	–	बेमतलब, अकारण
रुपयों की गरमी	–	धन का घमंड
बल्लमटेर	–	लुटेरे, गुंडे-बदमाश
मसक्कत	–	मशक्कत, मेहनत, परिश्रम
हसद	–	ईर्ष्या, डाह
छाती पर साँप लोटना	–	ईर्ष्या करना
टेनी मारना	–	कम तौलना
बाट खोटे रखना	–	तौल सही नहीं रखना
ईमान गँवाना	–	बेईमानी करना
गुनाह बेलज्जत नहीं रहना	–	बिना किसी लाभ के गुनाह नहीं करना
झिझकी	–	संकोच किया
झाँसा देना	–	भ्रमित करना
पेट की थाह लेना	–	अंदर की बात जानना
ईमान बेचना	–	विवशता के कारण झूठा या गलत आचरण करना
गोते खाना	–	इधर-उधर डूबना-उतराना
विजय-गर्व की तरंग	–	विजय की खुशी, खुशी की उमंग में
उद्दिष्ट	–	निश्चित, निर्धारित